

# अमृत विचार

# रंगोली



भारतेंदु नाट्य अकादमी के स्वर्ण जयंती समारोह में एक शाम मालिनी अवस्थी के नाम से भी सजी। खचाखच भरे राज बिसारिया प्रेक्षागृह में प्रख्यात लोक गायिका पद्मश्री मालिनी अवस्थी ने अभिनय, नृत्य और गायिकी में गुंथी जिंदगी के सफर की स्क्रिप्ट को इस अंदाज में पेश किया कि देखने वाले टग से रह गए।

मालिनी अवस्थी ने अपने इस दो घंटे के शो में यह साबित किया कि जिंदगी में कोई बड़ा मुकाम हासिल करने के पीछे न जाने कितने बरसों की जद्दोजहद होती है। एक बड़े परिवार में जन्म लेने या बड़े परिवार में शादी हो जाने से मंच तो हासिल हो सकते हैं, लेकिन उन मंचों पर टिके रहने के लिए लगातार कई बरस तक किए गए संघर्ष और अच्छे उस्तादों से हासिल की गई शिक्षा ही काम आती है।

—शबाहत हुसैन विजेता लखनऊ



## सुपरहिट शो और पद्मश्री सम्मान

रेलिया बैरिन पिया को लिए जाए रे जैसे गीतों के जरिए मालिनी ने तमाम सुपरहिट शो दिए। उनकी कला साधना ने उन्हें पद्मश्री से पहले यशभारती सम्मान, कालिदास सम्मान और अवध सम्मान दिलाए। उनकी साधना ने उन्हें ऐसी पहचान दी कि पति अपर मुख्य सचिव रहे हों या मौजूदा समय में मुख्यमंत्री के सलाहकार हैं, लेकिन यह आरोप नहीं लगता कि बड़े अफसर की बीवी हैं, इसलिए सफल हैं, जिसने उनके सुपरहिट शो देखे हैं, वो जानता है कि यह सफलता सिफारिश वाली नहीं जबरदस्त रियाज वाली है।

# शालू के मालिनी अवस्थी में बदलने का सफर

कला साधना के दौरान उस्ताद राहत अली खान न मिले होते, उस्ताद नगीना साहब का आशीर्वाद न मिला होता, गिरिजा देवी जैसी गुरु न मिली होतीं, तो कन्नौज के एक डॉक्टर के घर जन्मी शालू आईएएस अफसर अवनीश अवस्थी से शादी होकर भी शालू ही रह जातीं, मालिनी अवस्थी न बन पातीं। उन्हें ऐसे उस्ताद मिले, जिन्होंने कहा कि गजल सीखनी है, तो शौन काफ दुरुस्त होना चाहिए। वो सवाल उठाती हैं कि कहां हैं ऐसे उस्ताद जो शागिर्द की डायरी पर गजल लिखकर दें। वो बताती हैं कि ईसाई स्कूल में पढ़ीं, घर में उस्ताद आते थे मुसलमान। गोरखपुर में रहकर संस्कृत सीखीं। संस्कृत बीए तक साथ रही। उन्होंने माना कि अनुभव, जज्बात और किस्से कहानियों में भी शिक्षा होती है।

पिता मुख्य चिकित्सा अधीक्षक थे, उस्ताद राहत अली खां से उनके दोस्ताना रिश्ते थे, उन्होंने कहा कि मेरी बेटी को भी सिखा दें, एक दिन वो घर आए भी सिखाने, सबक भी दे गए, लेकिन तीन महीने तक वो लौटे नहीं और शालू वही सबक तीन महीने तक दोहराती रही। उनकी मां ने समझाया कि प्यासे के



पास कुआं नहीं आता, प्यासे को जाना पड़ता है कुएं के पास। मां गाड़ी चलाकर रोज बेटी को ले जातीं राहत अली खां के घर। वो भजन गाते तो लगता मंदिर में बैठे हैं। राम के भजन ऐसे सुनाते वैसे क्या कोई राम भक्त सुनाएगा।

एक तरफ संगीत की शिक्षा चल रही थी, तो दूसरी तरफ मां-बाप को कभी कहना नहीं पड़ा कि पढ़ लो। पढ़ाई ऐसी कि पूरी क्लास में अव्वल आती थीं। लाइट अक्सर गायब हो जाती थी, तो कुप्पी में बैटकर पढ़ाई करती थीं। स्कूली शिक्षा और संगीत ट्रेन के ट्रेक की तरह साथ-साथ चले एक जैसी रफ्तार में। पिता का

लखनऊ ट्रांसफर हो गया, तो भातखंडे में तालीम ली, रवींद्रालय में पहली बार गाया, तब धर्मनाथ मिश्र ने हारमोनियम पर संगत की, आज भी वही करते हैं। लखनऊ से हर शनिवार-रविवार गोरखपुर जाकर राहत अली खां से सीखने का क्रम चलता रहा। उस्ताद राहत अली लखनऊ में कार्यक्रम में आए तो उन्होंने अपने कार्यक्रम में शिष्या मालिनी से गवाया। वो उन्हें उस्ताद नगीना साहब का आशीर्वाद दिलाते ले गए। बड़ी हुई तो घर वालों को चिंता हुई कि गाती हैं, देशभर में कार्यक्रम करने जाती हैं, शादी कैसे होगी? हालांकि मां हर जगह साथ में जाती थीं, लेकिन उन्हें कैसर हो गया था। किसी ने कहा कि पड़ोस वाले अवस्थी जी का लड़का आईआईटी में पढ़ रहा है। उनसे बात चलाओ। बात हुई और मारुती वैन में सवार होकर अवस्थी परिवार मालिनी के घर पहुंच गया। उन्हें भातखंडे में क्लास से बुलाकर घर भेजा गया।

## लंदन में अंत्याक्षरी के शो ने बदल दिए दिन

टेलीविजन पर गजेन्द्र सिंह अंत्याक्षरी का संचालन कर रहे थे, उन्होंने बुलाया। लंदन में शो हुआ, तो मालिनी अवस्थी और भोजपुरी गायक बालेश्वर ने समां बांध दिया। इसके बाद पीछे मुड़कर देखने का मौका नहीं मिला।

## संगीत की दुनिया में शुरु की दूसरी पारी

जो स्लेट कोरी हो गई थी, उसे फिर से लिखने के लिए संवारा, संगीत की दुनिया में फिर से घुटनियों चलना शुरू किया। फिर से आकाशवाणी में काम मिलने लगा। संस्कृति विभाग कार्यक्रम देने लगा। अद्वैत शर्मा जब ललितपुर में डीएम थे, तो अस्मारी बाई से मिलने कालपी गई थीं। अस्मारी बाई ने समझाया था कि गाती थीं, तो गाती रहो।



## अवनीश अवस्थी से हुई शादी

मुलाकात के बाद अवनीश अवस्थी अपने ममेरे भाई के साथ मालिनी से मुलाकात करने आए। रिश्ता पक्का हो गया। उन्होंने कहा कि मेरी और मालिनी की पढ़ाई पूरी हो जाए, तब शादी होगी। इंजीनियरिंग की पढ़ाई पूरी हुई, तो अवनीश सिविल सर्विस की तैयारी करने लगे। वो आईएएस में सिलेक्ट हुए, सेलेक्शन के बाद अवनीश ने कहा—“सेवा के भाव से आईएएस में जा रहा हूँ। हो सकता है, तुम्हें वो सुख न दे पाऊं, जो आईएएस की पलियों को मिलता है।” मालिनी ने कहा—“तुम सबसे सम्मान से मिलना, फिर इसके बाद शादी हो गई।” शादी से पहले के दो साल दोनों ने एक दूसरे को खूब चिढ़ियां लिखीं। चिढ़ियां इसलिए लिखीं, क्योंकि पहले महीने इतनी बात की कि 42 हजार रुपये का बिल आ गया। दूसरे महीने भी ऐसा ही

होता, तो परिवार जान जाता कि दोनों हरदम बतियाते हैं। शादी के बाद लोगों को लगता था कि आईएएस की पत्नी है, इसलिए कार्यक्रम मिलते हैं। लोगों की यह सोच ऐसी बुझी कि घर में ही घुसी रह गई। अपने दोनो बच्चों के पालन-पोषण में लग गई। वो कहती हैं कि जीवन अनंद से भरा था, लेकिन अवनीश के पास समय नहीं था, मेरी स्थिति चांद तन्हा है आसमां तन्हा... और शाम वादा था ढल गया सारा... जैसी स्थिति हो गई। प्यार करने वाला पति, दो-दो बच्चों से भरी गोद, फिर भी बहुत कुछ खो गया था। गाना छूट गया था। पिताजी ने आकाशवाणी से बात की फिर से गाने की शुरुआत हुई।

## अनोखी परंपरा



## हैदराबाद की शाम: रूहानियत खुशबू और सुकून का संगम

आधुनिकता की चमक-दमक और ऊंची-ऊंची इमारतों के बीच भी हैदराबाद का पुराना शहर अपनी परंपराओं को संजोए हुए है। यहां की तंग गलियां और ऐतिहासिक हवेलियों में आज भी एक पुरानी रस जीवित है, जो हर शाम मगरिब की अजान के साथ निभाई जाती है। यह परंपरा है घर के दरवाजे खोलना और लोबान या अगरबत्ती की खुशबू से पूरे वातावरण को महकाना। जैसे ही मगरिब की अजान की आवाज गुंजाती है, पुराने शहर में एक खास तरह की शांति छा जाती है। दिनभर की हलचल मानो थम जाती है और घरों में एक अलग ही माहौल बन जाता है। इस समय घर की महिलाएं या बुजुर्ग खिड़कियों और मुख्य द्वार खोल देते हैं। साथ ही, मिट्टी के धुंएदान में सुलगते कोयलों पर लोबान डाला जाता है या अगरबत्ती जलाई जाती है, जिससे उठने वाला सुगंधित धुआं पूरे घर को एक रूहानी एहसास से भर देता है।

स्थानीय लोगों के लिए यह केवल एक परंपरा नहीं, बल्कि घर में सकारात्मक ऊर्जा और सुकून लाने का माध्यम है। कुछ लोगों का मानना है कि दिन और रात के संघिकाल में वातावरण में एक विशेष परिवर्तन होता है, जिसे शुभ माना जाता है। इसी कारण खुले दरवाजे उस सकारात्मकता के स्वागत का प्रतीक माने जाते हैं। हालांकि इसका कोई ठोस धार्मिक आधार नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक विश्वास और जीवनशैली का हिस्सा है। यह प्रथा केवल हैदराबाद तक सीमित नहीं है। भारत के कई हिस्सों में शाम के समय अगरबत्ती जलाना या दीपक जलाने की परंपरा है, जिसे शांति और सकारात्मकता से जोड़ा जाता है। दिलचस्प बात यह है कि यह रिवायत गंगा-जमुनी तहजीब की मिसाल भी पेश करती है। जिस समय मुस्लिम परिवारों में लोबान जलाया जाता है, उसी समय हिंदू परिवारों में संध्या के दौरान दीप जलाकर पूजा की जाती है। दोनों ही परंपराओं में शाम का समय पवित्र और शुभ माना गया है।

हालांकि इस्लामी मान्यताओं के अनुसार मगरिब के समय दरवाजे बंद रखने की सलाह दी जाती है, क्योंकि इसे संवेदनशील समय माना गया है। ऐसे में दरवाजे खोलने की यह परंपरा अधिकतर सांस्कृतिक रूप में प्रचलित है। इस रस्म के पीछे कुछ व्यावहारिक कारण भी हैं। लोबान का धुआं वातावरण को शुद्ध करने और कीटाणुओं व मच्छरों को दूर रखने में सहायक माना जाता है। वहीं, दरवाजे और खिड़कियां खोलने से घर में ताजी हवा का प्रवाह होता है, जिससे दिनभर की घुटन कम हो जाती है। हैदराबाद की यह परंपरा न केवल सांस्कृतिक विरासत को जीवित रखे हुए है, बल्कि जीवन में सुकून और संतुलन का संदेश भी देती है।

## लौकायन

## रूप बदलने वाले बहुरूपिए

एक बार बादशाह अकबर के दरबार में एक बहुरूपिया आया। उसने दरबार में चुनौती दी कि वह ऐसा भेष बदल सकता है कि उसे कोई पहचान नहीं सकता। अगर कोई उसके भेष में कमी निकाल दे, तो वह उसे अपना गुरु बना लेगा। शर्त मान ली गई। एक दिन बादशाह के दरबार में एक बेल घुस आया। सभी दरबारी इधर-उधर भागने लगे। बेल, बादशाह के सिंहासन के पास आकर पंगुराने लगा। तभी बीरबल ने एक कंकड़ बेल की पीठ पर मारा। बेल ने पीठ हिलाई। बस बीरबल बोल पड़ा—“शहंशाह, बेल बल नहीं बहुरूपिया है।” बेल



शिववरण चौहान लेखक

चोट लगने से उधर की खाल हिलता है, जिधर उसे चोट लगती है, किंतु बहुरूपिए ने धोखे से दूसरी तरफ की खाल हिला दी। एक छोटी-सी गलती से वह पकड़ा गया। एक समय था जब रूप बदलना एक महत्वपूर्ण कला थी। बहुरूपियों का समाज में सम्मान था। वे राजदरबारों में आदर पाते, इनाम-इकराम हासिल करते थे। जयपुर, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, मध्य प्रदेश के बहुरूपिए विख्यात थे। आज बहुरूपियों के परिवार संकट में हैं। बहुरूपियों की कला को सम्मान देने वाला कोई नहीं बचा। बहुरूपियों का इतिहास बहुत प्राचीन है। बहुरूपिए राजा, फकीर, साधु, देवी-देवता, डाकू, पागल, विद्वान, राजसैनिक, सिपाही, हरकारा, वैद्य, हकीम, गुजरी, महिला, बेल, बंदर आदि का रूप धारण कर लोगों का मनोरंजन करते थे। आज भी कुछ शहरों में बहुरूपियों को कभी-कभार हाट-बाजारों में घूमते देखा जा सकता है। रूप बदलने के लिए बहुरूपिया मिट्टी, सिंदूर, बाल आदि से लेकर आधुनिक साधनों का प्रयोग करते हैं।



होली, दीवाली के त्योहार पर आज भी बहुरूपियों को गली, मुहल्लों और बाजारों में घूमते हुए देखा जा सकता है। जैन साहित्य में बहुरूपिए की एक कथा प्रसिद्ध है। पाटन-गुजरात के महाराजा कुमार पाल का महामंत्री उदयन एक युद्ध में गंभीर रूप से घायल हो गया। उदयन ने अपने बेटों से कहा—“मेरा अंत समय आ गया है। यदि मैं पंचमहाव्रतधारी महामुनि के दर्शन कर लूं, तो मुझे मोक्ष प्राप्त हो जाए।” युद्ध भूमि में

किसी साधु का मिलना मुश्किल था। उसके बेटे वाग्भट्ट के दिमाग में एक बात आई। वह तुरंत एक बहुरूपिए के पास पहुंचा। धन देने का लालच देकर उसे साधु बनाकर ले आया। उदयन ने सामने मुनिराज को देखा तो बहुत प्रसन्न हुआ। चरण-स्पर्श के लिए मुनिराज को पास बुलाया और उसी के चरणों में अपने प्राण त्याग दिए।

वाग्भट्ट जब उस पैसे देने लगा तो उसने लेने से इंकार कर दिया। बोला—“जिस रूप को देखकर महामंत्री ने परम प्रसन्न व श्रद्धावानत होकर प्राण त्यागे, अब वह रूप नहीं बदलेगा।” सचमुच वह बहुरूपिया साधु बनकर वन में चला गया। बहुरूपियों का कहना है कि नाटक, नौटंकी और टीवी के कारण उनका पेशा लगभग समाप्त हो रहा है। अब लोग आदर नहीं देते। बच्चे जरूर हंसते हैं, पर बड़े लोग भगा देते हैं। उन्हें दुकान-दुकान, मकान-मकान भटकना पड़ता है, तब कहीं शाम को रोटी नसीब होती है। समाज व सरकार यदि बहुरूपियों को पुरस्कार, सम्मान या पेंशन देने लगे तो लुप्त होती इस कला को बचाया जा सकता है।

## प्राचीन वैश्विक संपर्कों के साक्ष्य : मिस्र की समाधियों में तमिल शिलालेख

अक्सर देखा जाता है कि पर्यटक किसी ऐतिहासिक इमारत या स्थल पर अपना नाम अंकित कर देते हैं। सामान्यतः इसे अनुचित और विरासत के प्रति असंवेदनशील व्यवहार माना जाता है। किंतु विडंबना यह है कि कभी-कभी ऐसी ही लिखावटें इतिहास के कुछ अनजाने अध्यायों को उजागर करने का माध्यम भी बन जाती हैं। हाल के दिनों में सामने आई एक महत्वपूर्ण खोज इसी का उदाहरण है, जिसमें लगभग 2,000 वर्ष पूर्व एक भारतीय पर्यटक सिकाई कोरेंट मिस्र के प्रसिद्ध ‘वैली ऑफ द किंग्स’ में प्राचीन तमिल भाषा में अपना नाम आठ बार अंकित किए जाने के प्रमाण मिले हैं। यह खोज न केवल भारतीय उपमहाद्वीप और मिस्र के बीच प्राचीन संपर्कों को रेखांकित करती है, बल्कि यह भी दर्शाती है कि सांस्कृतिक और व्यापारिक आदान-प्रदान की परंपरा कितनी गहरी और व्यापक रही है।

भारतीय उपमहाद्वीप और मिस्र के बीच प्राचीन संपर्कों को रेखांकित करता यह महत्वपूर्ण शोध फ्रांसीसी विद्वान चार्लोट शिमड और स्विस् प्रोफेसर इंगो स्ट्रॉच द्वारा प्रस्तुत किया गया है। उनके अनुसार, मिस्र की विभिन्न समाधियों में प्राप्त भारतीय भाषाई शिलालेखों में से लगभग एक-तिहाई अकेले सिकाई कोरेंट द्वारा अंकित हैं। यह तथ्य इस खोज को और भी अधिक विशिष्ट बनाता है, क्योंकि यह किसी एक व्यक्ति की उपस्थिति और उसके सांस्कृतिक हस्ताक्षर का प्रमाण प्रस्तुत करता है। यह शोध “तमिल एपिग्राफी : चार दिवसीय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन (11-14 फरवरी 2026), कार्यवाही खंड 1” शोधक पुस्तक में प्रकाशित हुआ है और इसे फरवरी 2026 में चैन्नई में आयोजित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन में प्रस्तुत किया गया। इस सम्मेलन में तमिल अभिलेखों,



उनके ऐतिहासिक संदर्भों और वैश्विक प्रसार पर गंभीर विमर्श हुआ। विशेषज्ञों का मानना है कि सिकाई कोरेंट संभवतः एक व्यापारी, यात्री या तीर्थयात्री रहे होंगे, जो उस समय के समुद्री व्यापार मार्गों के माध्यम से भारत से मिस्र पहुंचे। स्पष्ट है कि प्राचीन काल में दक्षिण भारत, विशेषकर तमिल क्षेत्र, रोमन साम्राज्य और मिस्र के साथ सक्रिय व्यापारिक संबंध रखता था। मसाले, वस्त्र, मोती और हाथी-दांत जैसी वस्तुएं भारत से निर्यात होती थीं, जबकि सोना, चांदी और अन्य विलासितापूर्ण वस्तुएं आयात की जाती थीं। मिस्र के मकबरों में तमिल लिपि में अंकित नाम इस बात के प्रमाण हैं कि भारतीय व्यापारी या यात्री न केवल वहां



सुमन कुमार सिंह कलाकार/कला लेखक

पहुंचते थे, बल्कि उन्होंने अपनी उपस्थिति दर्ज कराने के लिए स्थानीय स्मारकों पर लेखन भी किया। यह ध्रुवित आज के “फ्रैफ्टी” के समान है, जहां व्यक्ति किसी स्थान



पर अपने अस्तित्व का चिह्न छोड़ता है। हालांकि प्राचीन संदर्भ में यह केवल व्यक्तिगत अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि सांस्कृतिक उपस्थिति का भी संकेत है। इस खोज का एक महत्वपूर्ण पहलू यह भी है कि यह भारतीय भाषाओं विशेषतः तमिल-की प्राचीनता और उसके अंतर्राष्ट्रीय प्रसार को रेखांकित करती है।

तमिल विश्व की सबसे प्राचीन जीवित भाषाओं में से एक है और इस प्रकार के शिलालेख उसके ऐतिहासिक विस्तार के ठोस प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। इतिहासकारों और पुरातत्वविदों के लिए यह खोज अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह वैश्विक इतिहास के उस पक्ष को उजागर करती है, जिसमें विभिन्न सभ्यताओं के बीच संपर्क और संवाद स्थापित था। यह केवल व्यापार तक सीमित नहीं था, बल्कि सांस्कृतिक, भाषाई और मानवीय स्तर पर भी सक्रिय था। अंततः सिकाई कोरेंट द्वारा छोड़े गए ये तमिल शिलालेख हमें यह समझने में मदद करते हैं कि प्राचीन विश्व उतना अलग-थलग नहीं था, जितना अक्सर माना जाता है। बल्कि, यह एक जीवंत, परस्पर जुड़ा हुआ संसार था, जहां लोग, भाषाएं और संस्कृतियां सीमाओं को पार कर एक-दूसरे से संवाद कर रही थीं। यह खोज न केवल अतीत की एक रोचक कहानी है, बल्कि वर्तमान में वैश्विक सांस्कृतिक संचाल की जड़ों को समझने का एक महत्वपूर्ण माध्यम भी है।



## हुई आंखें नम

रात की खामोशी में ‘चांदनी’ मुस्कुराती है, कहीं दूर से उनकी आवाज वली आती है। कभी-‘पिया तू अब तो आजा...’ की धुन, ये दिल को मचलाने लगती ‘गीत’ को सुन। कभी ‘दम मारो दम’ की जबरदस्त मस्ती, रूह में रंग भर जाती है आशा ताई हस्ती। हर युग, हर दौर में उनका ‘जादू’ है कायम, सदियों गूंगा ये सुर हर पीढ़ी को नायब।

जो उन्होंने हमें दिया है गजल या हो दुमरी, देखी फिल्मी गीतों की ‘रंग-रंगीली’ झुमरी। मधुर स्वर की छाया हर दिल को छू जाती, ‘संगीत’ की रंगीन दुनिया में सबको रमाती। आशाजी ने लिखा है संगीत में अपना नाम, कोई जब गीत बजे दिल को रख लेते थाम। उनकी मीठी तान सुन के हर दर्द खो जाता हुई आंखें नम हमारी तोड़ गई जैसे माता।

—संजय एम तराणकर, कोवि